प्रकाशन हेतु अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय,बिलासपुर

रिट याचिका श्रम सं 5110/2011

सुरक्षित किया गया :20.03.2025

पारित किया गया:23.06 .2025

एम. मोहन राव, आयु 49 वर्ष, पूर्व–तकनीशियन मशीन की दुकान संख्या 2, पीएन..सं 148777, भिलाई इस्पात संयंत्र, भिलाई जिला।दुर्ग (सी. जी.), निवासी.जे–12, सी, मारोदा सेक्टर, भिलाई, जिला दुर्ग (सी. जी.)

---याचिकाकर्ता

बनाम

1. प्रबंध निदेशक, भिलाई इस्पात संयंत्र, तहसील और जिला दुर्ग (सी. जी.) 2.श्रम न्यायालय , दुर्ग

3. राज्य औद्योगिक न्यायालय , छत्तीसगढ़, रायपुर

---उत्तरवादीगण

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

याचिकाकर्ता हेतु:––श्री सुदीप जौहरी, अधिवक्ता

उत्तरवादी सं.1 हेतु :––डॉ. सौरभ कुमार पांडे, अधिवक्ता

माननीय श्री नरेंद्र कुमार व्यास, न्यायाधीश

सीएवी आदेश

1. याचिकाकर्ता ने भारतीय संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत यह रिट याचिका दायर की है, जिसमें सिविल अपील क्रमांक 56/सी.जी.आई.आर.ए./ए/11/2010 में राज्य औद्योगिक न्यायालय, रायपुर द्वारा पारित अपीलीय आदेश दिनांक 29.04.2011 को चुनौती दी गई है, जिसमें श्रम न्यायालय द्वारा प्रकरण क्रमांक 1/ए/45/सीजीआईआर/2003 में पारित दिनांक 27.07.2010 के आदेश की पुष्टि की गई है, जिसके द्वारा याचिकाकर्ता द्वारा उसकी सेवा समाप्ति को चुनौती देने वाला आवेदन खारिज कर दिया गया था।
2. मामले के संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार हैं:––

(क) याचिकाकर्ता उत्तरवादी क्रमांक 1 के यहां 1988 से बुमिका अंगारे द्वारा डिजिटल रूप से हस्ताक्षरित

तकनीशियन के पद पर कार्यरत था और वह प्रबंधन से स्वीकृत अवकाश के बिना 01.05.1994 से 17.09.1994 तक 140 दिनों तक अनुपस्थित रहा, इसलिए विभागीय जांच की गई और 18.08.1995 के आदेश द्वारा उसकी सेवाएं समाप्त कर दी गईं।

(ख) सेवा समाप्ति के आदेश से व्यथित होकर, याचिकाकर्ता ने श्रम न्यायालय दुर्ग के समक्ष दिनांक 24.04.2003 को एम.पी.आई.आर. अधिनियम, 1960 की धारा 31(3) के तहत एक आवेदन प्रस्तुत किया, जिसमें आरोप लगाया गया कि जांच प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत का उल्लंघन करते हुए की गई है, जहां उसे सुनवाई का कोई उचित अवसर नहीं दिया गया।यह भी कहा गया है कि प्रबंधन द्वारा पारित सेवा समाप्ति का दंड कथित कदाचार के अनुपात से अधिक है और उसने पूर्ण बकाया वेतन के साथ बहाली की प्रार्थना की है।

3. उत्तरवादी संख्या 1 ने लिखित बयान दायर किया है और आवेदन दायर करने में देरी के संबंध में आपत्ति भी उठाई है, जिसमें तर्क दिया गया है कि:---

(क) बिना किसी उचित कारण के, याचिकाकर्ता प्रबंधन से अवकाश स्वीकृत कराए बिना 140 दिनों तक अनुपस्थित रहा, जो कंपनी के प्रमाणित स्थायी आदेशों के तहत एक गंभीर कदाचार है। तदनुसार, उसे 28.10.1994 को आरोप-पत्र जारी किया गया, जिसमें याचिकाकर्ता के विरुद्ध निम्नलिखित आरोप लगाए गए: "मई, 1994 से बिना अवकाश/पूर्व सूचना/अवकाश स्वीकृत कराए अनाधिकृत रूप से ड्यूटी से अनुपस्थित रहना"

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

(ख) यह भी तर्क दिया गया है कि उत्तरवादी ने प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत के अनुसार विभागीय जाँच की है। जाँच के अभिलेख से यह भी पता चलता है कि 03.06.1995 को याचिकाकर्ता ने स्वयं 140 दिनों तक अनुपस्थित रहने के आरोपों को स्वीकार किया और अपने द्वारा किए गए कदाचार को क्षमा करने का अनुरोध किया।उत्तरवादी ने दिनांक 22.08.1995 के आदेश द्वारा सेवा से बर्खास्तगी का आदेश पारित किया। यह भी तर्क दिया गया है कि उसकी बर्खास्तगी का आदेश उसके द्वारा किए गए कदाचार के अनुपात में था।यह भी कहा गया है कि आवेदन पर समय सीमा लागू है, क्योंकि उनकी सेवाएं वर्ष 1995 में समाप्त हो गई थीं, जबकि उन्होंने श्रम न्यायालय के समक्ष आवेदन 8 वर्ष बीत जाने के बाद वर्ष 2003 में दायर किया था, जबकि सी.जी.आई.आर. अधिनियम की धारा 62 में एक वर्ष की समय सीमा का प्रावधान है। यह भी कहा गया है कि उन्हें कभी छुट्टी स्वीकृत नहीं हुई, इसलिए, इतने लंबे समय तक अनुपस्थित रहने के कारण उनकी सेवाएं समाप्त करना उचित ही है और वे आवेदन को खारिज करने की प्रार्थना करते है।

4. याचिकाकर्ता ने उत्तरवादी द्वारा उठाई गई आपत्ति का उत्तर दाखिल किया है, जिसमें कहा गया है कि उसने भी समाप्ति के आदेश के विरुद्ध दिनांक 07.09.1995, 04.10.1995, 06.11.1995, 03.05.1996, 06.12.1996, 09.04.1997, 05.10.1997, 03.02.1998, 10.12.1998, 04.03.1999 और 10.05.1999 को अपनी पुनर्नियुक्ति के लिए अपील के निराकरण हेतु अपील प्रस्तुत की थी, लेकिन उस पर

विचार नहीं किया गया, इसलिए उसने वर्ष 1999 में आवेदन दाखिल किया है, इसलिए देरी को माफ करने की प्रार्थना की गई है।

5. श्रम न्यायालय ने चार मुद्दे तय किए हैं और दिनांक 09.10.2006 के आदेश के तहत, श्रम न्यायालय ने विभागीय जाँच से संबंधित विवाद्यक का निर्णय किया है, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि है कि जाँच प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत का उल्लंघन करके की गई है।तदनुसार, इसने विभागीय जाँच को दूषित कर दिया है, इसलिए, उत्तरवादी संख्या 1 को याचिकाकर्ता द्वारा किए गए कदाचार को साबित करने के लिए साक्ष्य प्रस्तुत करने का अवसर दिया गया।उत्तरवादी संख्या 1 ने औद्योगिक न्यायालय में सी.जी.आई.आर. अधिनियम की धारा 67 के अंतर्गत विविध आवेदन दायर करके इस आदेश को चुनौती दी और विद्वान औद्योगिक न्यायालय ने अपने आदेश दिनांक 25.01.2007 द्वारा प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा दायर विविध आवेदन को खारिज कर दिया।इसके बाद, मामले को उत्तरवादी संख्या 1 के साक्ष्य के लिए लिया गया, जिन्होंने ए.के. श्रीवास्तव नामक साक्षीयो की परीक्षा की, जिन्होंने साक्ष्य में स्पष्ट रूप से कहा कि याचिकाकर्ता ने न तो छुट्टी स्वीकृत कराई है और न ही छुट्टी के लिए आवेदन प्रस्तुत किया है और वह सेवा से अनुपस्थित रहे।उत्तरवादी संख्या 1 ने श्री सिद्धार्थ कुमार दास से भी पूछताछ की, जिन्होंने कहा कि याचिकाकर्ता को पहले भी ड्यूटी से अनुपस्थित रहने के लिए दंडित किया गया था।श्रम न्यायालय ने साक्ष्य और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का मूल्यांकन करने के बाद, दिनांक 27.10.2010 के अपने आदेश द्वारा आवेदन को खारिज कर दिया।श्रम न्यायालय ने आवेदन खारिज करते हुए यह निष्कर्ष दर्ज किया कि याचिकाकर्ता 01.05.1994 से 17.09.1994 तक यानि लगभग 140 दिन बिना अवकाश स्वीकृत किए अनुपस्थित रहा जो कि भिलाई इस्पात संयंत्र के स्थायी आदेश के अनुसार एक बड़ा कदाचार है और उसके बाद उसने वर्ष 2003 में सेवा समाप्ति को चुनौती देने के लिए आवेदन दायर किया, ऐसे में यह नहीं कहा जा सकता कि याचिकाकर्ता अपने कर्तव्य के प्रति गंभीर था और उसने माना है कि सजा कदाचार के अनुपात में है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

6. इस आदेश से व्यथित होकर याचिकाकर्ता ने सिविल न्यायालय के समक्ष सिविल अपील दायर की जिसे औद्योगिक न्यायालय ने 29.04.2011 को खारिज कर दिया और औद्योगिक न्यायालय ने अपील खारिज करते हुए यह निष्कर्ष दर्ज किया कि याचिकाकर्ता को सेवा से बर्खास्त करना क्योंकि वह 140 दिन बिना अवकाश स्वीकृत किए अनुपस्थित रहा, कदाचार के अनुपात में है।विद्वान औद्योगिक न्यायालय ने भी अपना निष्कर्ष दर्ज किया है कि आवेदन समय-सीमा के अंतर्गत वर्जित है क्योंकि आवेदन दिनांक 24.04.2003 को सेवा समाप्ति के 08 वर्ष पश्चात प्रस्तुत किया गया है और तदनुसार, न्यायालय ने इसे समय-सीमा के अंतर्गत वर्जित मानते हुए अस्वीकार कर दिया है।इन आदेशों से व्यथित होकर, याचिकाकर्ता ने यह रिट याचिका प्रस्तुत की है।

7. याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि दोनों विचारण न्यायालय ने यह निष्कर्ष दर्ज करने में अवैधानिकता की है कि आवेदन समय-सीमा के कारण वर्जित है क्योंकि याचिकाकर्ता ने पहले ही अपीलीय प्राधिकारियों के समक्ष अपील दायर कर दी है जिस पर निर्णय नहीं हुआ है, ऐसे में एमपीआईआर अधिनियम की धारा 62 के प्रावधान लागू नहीं होंगे।उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि अन्यथा भी श्रम कानूनों में समय-सीमा

अधिनियम का प्रावधान लागू होता है और याचिकाकर्ता ने समाप्ति की तिथि से एक वर्ष के भीतर श्रम न्यायालय के समक्ष आवेदन दायर न करने का उचित कारण प्रस्तुत किया है, ऐसे में दोनोंविचारण न्यायालय को विलंब को क्षमा कर देना चाहिए था।उन्होंने आगे कहा कि याचिकाकर्ता पर लगाया गया दंड, याचिकाकर्ता द्वारा किए गए कथित कदाचार के लिए कठोर है।इस प्रकार, वे पूर्वोक्त आदेशों को रद्द करने की प्रार्थना करते है।

8. इसके विपरीत, उत्तरवादी संख्या 1 के विद्वान अधिवक्ता प्रस्तुत करते है आक्षेपित आदेश विधिक तथा न्यायोचित हैं और उनमें हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि याचिकाकर्ता बिना छुट्टी स्वीकृत कराए या आवेदन प्रस्तुत किए 140 दिनों तक सेवा से अनुपस्थित रहा, जो कि कंपनी के प्रमाणित स्थायी आदेशों के अनुसार एक बड़ा कदाचार है और वे रिट याचिका को खारिज करने की प्रार्थना करते है।

9. मैंने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना है और अभिलेख पर प्रस्तुत अभिलेख का अत्यंत संतुष्टिपूर्वक अवलोकन किया है।

10. पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत निवेदनों से, इस न्यायालय के निर्णय हेतु निम्नलिखित बिन्दु उभर कर आए हैं:---

"(I) क्या विचारण न्यायालय द्वारा याचिकाकर्ता द्वारा दायर आवेदन को समय-सीमा के कारण खारिज करना न्यायोचित था?

(II) क्या अनुपस्थिति के लिए याचिकाकर्ता पर लगाया गया सेवा-समाप्ति का दंड कदाचार के अनुपात में है या नहीं?"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

11 का पृष्ठ संख्या 6। विवाद्यक क्रमांक 1 का निर्धारण करने के लिए, इस न्यायालय के लिए छत्तीसगढ़ औद्योगिक संबंध अधिनियम के सुसंगत प्रावधानों के साथ-साथ सीमा अधिनियम की धारा 29 का विस्तार करना समीचीन है, जो इस प्रकार है:---

"29. व्यावृत्तियां :--

(1) इस अधिनियम की कोई भी बात भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 (1872 का 9) की धारा 25 पर प्रभाव नहीं डालेगी।

(2) जहां कि कोई विशेष या स्थानीय विधि किसी वाद, अपील या आवेदन के लिए कोई ऐसा परिसीमा काल विहित करती है जो अनुसूची द्वारा विहित परिसीमा काल से भिन्न है वहां धारा 3 के उपबन्ध ऐसे लागू होंगे मानो वह परिसीमा काल अनुसूची द्वारा विहित परिसीमा काल हो; तथा किसी बाद, अपील या आवेदन के निमित्त किसी विशेष या स्थानीय विधि द्वारा विहित परिसीमा काल का अवधारण करने के प्रयोजन के लिए, धारा 4 से धारा 24 तक के (जिनके अन्तर्गत ये दोनों धाराएं भी आती हैं) उपबन्ध केवल वहीं तक और उसी विस्तार तक लागू होंगे जहां तक और जिस विस्तार तक वे उस विशेष या स्थानीय विधि द्वारा अभिव्यक्त तौर पर अपवर्जित न हों।

(3) विवाह और विवाह–विच्छेद विषयक किसी तत्समय प्रवृत्त विधि में अन्यथा उपबन्धित के सिवाय इस अधिनियम की कोई भी बात ऐसी किसी विधि के अधीन के किसी वाद या अन्य कार्यवाही को लागू नहीं होगी। (4) धाराएं 25 और 26 तथा धारा 2 में की "सुखाचार" की परिभाषा, उन राज्यक्षेत्रों में उद्भूत मामलों को लागू नहीं होगी जिन पर भारतीय सुखाचार अधिनियम, 1882 (1882 का 5) का तत्समय विस्तार हो। "धारा 62.कार्यवाहियों की शुरुआत–कार्यवाहियांश्रम न्यायालय के समक्ष कार्यवाही निम्नलिखित तिथियों में प्रारंभ की जाएगी–

(i) धारा 61 की उपधारा (1) के पैरा (क) के खंड (क) के अंतर्गत आने वाले विवाद के संबंध में, विवाद की तिथि से दो वर्ष के भीतर; परंतु यह कि–

(क) यदि विवाद किसी कर्मचारी की सेवाओं की समाप्ति से संबंधित है, तो ऐसी कार्यवाही संबंधित कर्मचारी की सेवाओं की समाप्ति की तिथि से एक वर्ष के भीतर प्रारंभ की जाएगी;

(ख) पूर्वगामी उपबंध में अंतर्विष्ट कोई बात लागू नहीं होगी यदि संबंधित कर्मचारी ने धारा 31 की उपधारा (3) में अंतर्विष्ट उपबंधों के अनुसार, जो उक्त तिथि से पूर्व विद्यमान थे, 30 जुलाई, 1976 से पूर्व संपर्क किया था और उस स्थिति में धारा 31 की उपधारा (3) और इस धारा के खंड (झ) में अंतर्विष्ट उपबंध उसी प्रकार लागू होंगे जैसे वे उक्त तिथि से पूर्व थे

(ग) जहां किसी कर्मचारी ने किसी नियम, विनियम या स्थायी आदेश के अधीन सेवा समाप्ति के आदेश के विरुद्ध सक्षम प्राधिकारी को अपील या अभ्यावेदन के लिए निर्धारित अवधि के भीतर अपील या अभ्यावेदन प्रस्तुत किया हो या जहां सेवा समाप्ति के आदेश के तीन माह के भीतर ऐसी कोई अवधि निर्धारित नहीं की गई हो, वहां ऐसी कार्यवाही अपील या अभ्यावेदन के निपटान की तारीख से एक वर्ष के भीतर, जैसा भी मामला हो, प्रारंभ की जा सकेगी।

(ii) धारा 61 की उपधारा (1) के पैराग्राफ (ए) के खंड (सी) में निर्दिष्ट मामलों के संबंध में, हड़ताल, तालाबंदी, ठहराव, बंद होने या नियोक्ता, कर्मचारियों के प्रतिनिधि, किसी भी कर्मचारी जो सीधे तौर पर प्रभावित होता है या श्रम अधिकारी द्वारा किए गए आवेदन पर परिवर्तन करने के तीन महीने के भीतर;परंतु कि श्रम न्यायालय, पर्याप्त कारणों से, अधिनियम के तहत किसी परिवर्तन को अवैध घोषित करने के लिए किसी भी आवेदन को, उस तारीख से तीन महीने की समाप्ति के बाद स्वीकार कर सकता है, जिस दिन ऐसा परिवर्तन किया गया था।''

12. परिसीमा अधिनियम की धारा 29 के मात्र अवलोकन से, यह स्पष्ट है कि परिसीमा अधिनियम, 1963 के प्रावधानों का कोई विशिष्ट अपवर्जन नहीं है और धारा 4 से 24 दोनों लागू होंगे।सी.जी.आई.आर. अधिनियम की धारा 62 के प्रावधानों से यह स्पष्ट है कि यदि विधायिका सीमा अधिनियम के प्रावधानों को अपवर्जित करना चाहती है तो वह ऐसा एक विशिष्ट शब्द में कह सकती थी।वैसे भी, सी.जी.आई.आर. एक उदार और लाभकारी क़ानून है, विधायिका द्वारा स्पष्ट और सुस्पष्ट आदेश के अभाव में यह कहना उचित नहीं होगा कि किसी कर्मचारी का दावा इसलिए रद्द कर दिया जाएगा क्योंकि उसने समय सीमा के भीतर श्रम न्यायालय का दरवाजा नहीं

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

खटखटाया है और सीमा अधिनियम के अपवर्जन के मद्देनजर, यह श्रम न्यायालय के समक्ष कार्यवाही पर लागू होता है।परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 29 और छत्तीसगढ़ औद्योगिक संबंध अधिनियम, 1960 की प्रयोज्यता पर मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय की **माननीय पूर्ण पीठ द्वारा मोहम्मद सगीर बनाम भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स, 2004 (2)** एमपीएलजे 359 के मामले में पहले ही विचार किया जा चुका है, जिसमें पूर्ण पीठ ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया हैः

"31. उपरोक्त आधारों को ध्यान में रखते हुए, हम निम्नलिखित निष्कर्ष पर पहुँचते हैं:---

(i) विजय सिंह (सुप्रा) के मामले में निर्धारित कानून की व्याख्या कि सीमा अधिनियम के प्रावधान अधिनियम (1977 का अधिनियम संख्या 3) की धारा 5 के तहत प्रस्तुत आवेदन पर लागू नहीं होंगे, क्योंकि यह एक घोषणात्मक वाद की प्रकृति की मूल कार्यवाही है क्योंकि विशेष क़ानून के तहत एक अलग प्रकार की सीमा निर्धारित की गई है, सही नहीं है।

(ii) नारायण सिंह (सुप्रा) के मामले में दिया गया निर्णय कानून को सही ढंग से नहीं बताता है, जहाँ तक यह घोषित करता है कि सीमा अधिनियम एमपीआईआर अधिनियम की धारा 62 के तहत कार्यवाही पर लागू नहीं होता है।

(iii) एमपीआईआर अधिनियम की धारा 62 के अंतर्गत प्रयुक्त भाषा, सीमा अधिनियम की धारा 29(2) के अंतर्गत प्रयोज्यता के लिए आवश्यक दो तत्वों को पूरा करती है और इसलिए, उक्त प्रावधान लागू होता है।

(iv) कोई कर्मचारी जो एमपीआईआर अधिनियम की धारा 62 के अंतर्गत निर्धारित सीमा से परे आवेदन करता है, वह हमेशा सीमा अधिनियम की धारा 5 के अंतर्गत आवेदन कर सकता है और यदि पर्याप्त आधार दर्शाए गए हों तो श्रम न्यायालय विलंब को माफ कर सकता है।

32. कानून के अनुसार इस पर विचार करने के लिए मामले को विद्वान एकल न्यायाधीश के समक्ष रखा जाए।"

13. इस प्रकार, सीमा अधिनियम, 1963 की धारा 29 के अनुसार और इस तथ्य के तहत कि परिसीमा अधिनियम का कोई विशिष्ट अपवर्जन नहीं है, परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 5 के प्रावधान सी.जी.आई.आर. अधिनियम की धारा 62 के तहत कार्यवाही में लागू होंगे।

14. अब मामले के तथ्यों पर आते हैं, यह सुस्पष्ट है कि याचिकाकर्ता ने प्रबंधन के समक्ष अपील की है जो उसके बाद लंबित थी, उसने प्रबंधन के समक्ष आवेदन दायर किया है जिस पर निर्णय नहीं हुआ है, ऐसे में यह नहीं माना जा सकता है कि आवेदन परिसीमा द्वारा वर्जित है, इस प्रकार दोनों विचारण न्यायालय ने विलंब और विलंब के आधार पर याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत आवेदन को खारिज करने में अवैधता की है।तदनुसार, बिंदु संख्या 1 का उत्तर याचिकाकर्ता के पक्ष में दिया जाता है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

15. जहां तक बिंदु संख्या 2 का संबंध है, मामले का अभिलेख स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि याचिकाकर्ता 01.05.1994 से 17.09.1994 तक 140 दिनों के लिए अनुपस्थित रहा और इससे पहले भी वह अनुपस्थित रहा, जिसके लिए उसे 03 मौकों पर यानी 11.12.1992, 28.02.1994 और 28.10.1994 को दंडित किया गया था और याचिकाकर्ता का कार्यकाल केवल 08 वर्ष है, जिसमें उसे समाप्ति का दंड आदेश जारी करने से पहले कई मौकों पर दंडित किया गया है।अभिलेख के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि याचिकाकर्ता को अनधिकृत रूप से अनुपस्थित रहने के लिए वर्ष 1992 में चेतावनी देकर दंडित किया गया, तत्पश्चात वर्ष 1993 में संचयी प्रभाव के बिना वेतन में कटौती की गई तथा वर्ष 1994 में 03 वर्ष की अवधि के लिए एल–4 से एल–3 तक पदावनत किया गया।इन तथ्यों को याचिकाकर्ता ने भी स्वीकार किया है, जैसा कि श्रम न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए गए एक्स.डी/3 से स्पष्ट है।इस प्रकार, उत्तरवादी संख्या 1 के पास यह निष्कर्ष दर्ज करने के लिए पर्याप्त सामग्री थी कि याचिकाकर्ता आदतन अनुपस्थित रहता है।यहाँ तक कि याचिकाकर्ता ने भी यह अभिलेख नहीं रखा है कि उसने स्वीकृत अवकाश के लिए आवेदन प्रस्तुत किया है और जब तक सक्षम प्राधिकारी द्वारा अवकाश स्वीकृत नहीं किया जाता, तब तक यह अनाधिकृत रूप से स्वीकृत रहेगा।गुजरात विद्युत बोर्ड एवं अन्य बनाम आत्माराम सुंगोमल पोशानी के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने 1989 (2) एससीसी 602 में रिपोर्ट दी थी, जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कंडिका 6 में निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया हैः –

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

"6. इसमें कोई विवाद नहीं है कि उत्तरवादी को उपरोक्त पत्र प्राप्त हुआ था क्योंकि उसने 20 अप्रैल, 1974 को अधीक्षण अभियंता को एक उत्तर भेजा था, जिसकी एक प्रति याचिकाकर्ता द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष अपनी याचिका के साथ अनुलग्नक 'जे' के रूप में संलग्न की गई थी।उस पत्र के माध्यम से उत्तरवादी ने कहा कि वह सूरत से उकाई स्थानांतरण पर पुनर्विचार के लिए प्रस्तुत अभ्यावेदन के निर्णय की प्रतीक्षा कर रहा था और इसलिए, उसके अनधिकृत अवकाश पर रहने का प्रश्न गलत था।चूँकि उत्तरवादी ने अपनी अनुपस्थिति के लिए कोई स्वीकृत अवकाश प्राप्त नहीं किया था, इसलिए उसकी ड्यूटी से अनुपस्थिति अनधिकृत थी।किसी भी सरकारी कर्मचारी या किसी भी सार्वजनिक उपक्रम के कर्मचारी को केवल स्थानांतरण आदेश के विरुद्ध अभ्यावेदन लंबित होने के कारण, बिना अवकाश स्वीकृत किए ड्यूटी से अनुपस्थित रहने का अधिकार नहीं है।"

16. इस प्रकार, मामले का अभिलेख स्पष्ट रूप से स्थापित करता है कि याचिकाकर्ता आदतन अनुपस्थित रहता है और वह 140 दिनों तक अनुपस्थित रहा। मेरा विचार है कि दंड उसके द्वारा किए गए कदाचार के अनुपात में है। वैसे भी विधि की यह सुस्थापित स्थिति है कि सजा देना प्रबंधन का प्रबंधकीय कार्य है और जब तक सजा इतनी चौंकाने वाली न हो या न्यायालय की चेतना को प्रभावित न करे, न्यायालय को उसमें हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने राजस्थान राज्य एवं अन्य बनाम भूपेंद्र सिंह मामले में, जो 2024 में रिपोर्ट किया गया था, आईएनएससी 592 में निम्नलिखित निर्णय दिया है:–

"26. भारत संघ बनाम के जी सोनी, (2006) 6 एससीसी 794 में, यह राय दी गई थी: '14.इन सभी निर्णयों में एक बात समान रूप से कही गई है कि न्यायालय को प्रशासक के निर्णय में तब तक हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए जब तक कि वह निर्णय अतार्किक न हो या प्रक्रियागत अनुचित न हो या न्यायालय की

अंतरात्मा को झकझोरने वाला न हो, अर्थात वह तर्क या नैतिक मानकों के विरुद्ध हो।वेडनसबरी मामले में जो कहा गया है उसे देखते हुए [एसोसिएटेड प्रोविंशियल पिक्चर हाउसेज लिमिटेड बनाम वेडनसबरी कॉर्पोरेशन, (1948) 1 केबी 223:(1947) 2 ऑल ईआर 680 (सीए)] न्यायालय प्रशासक द्वारा किए गए निर्णय की सत्यता पर विचार नहीं करेगा, और न्यायालय को प्रशासक के निर्णय के स्थान पर अपना निर्णय नहीं देना चाहिए।

न्यायिक पुनर्विलोकन का दायरा निर्णय लेने की प्रक्रिया में कमी तक सीमित है, न कि निर्णय तक।15. दूसरे शब्दों में, जब तक अनुशासनात्मक प्राधिकारी या अपीलीय प्राधिकारी द्वारा लगाया गया दंड न्यायालय/न्यायाधिकरण की अंतरात्मा को झकझोर न दे, तब तक हस्तक्षेप की कोई गुंजाइश नहीं है।इसके अतिरिक्त, मुकदमों की अवधि कम करने के लिए, असाधारण और दुर्लभ मामलों में, इसके समर्थन में ठोस कारण दर्ज करके उचित दंड लगाया जा सकता है।सामान्यतः, यदि लगाया गया दंड अत्यधिक अनुपातहीन है, तो अनुशासनात्मक प्राधिकारी या अपीलीय प्राधिकारी को लगाए गए दंड पर पुनर्विचार करने का निर्देश देना उचित होगा।' (जोर दिया गया)

27. उत्तर प्रदेश राज्य बनाम मनमोहन नाथ सिन्हा, (2009) 8 एससीसी 310 में दो विद्वान न्यायाधीशों द्वारा विधिक स्थिति को पुनः दोहराया गया:

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

'15. विधिक स्थिति यह सुस्थापित है कि न्यायिक समीक्षा की शक्ति निर्णय के विरुद्ध निर्देशित नहीं है, बल्कि निर्णय लेने की प्रक्रिया तक ही सीमित है।न्यायालय निर्णय के गुण–दोष पर निर्णय नहीं देता। उच्च न्यायालय के लिए यह अधिकार नहीं है कि वह जाँच अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत साक्ष्यों का पुनर्मूल्यांकन करे और जाँच अधिकारी द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों की अपील न्यायालय के रूप में जाँच करके अपने निष्कर्ष पर पहुँचे।वर्तमान मामले में, उच्च न्यायालय ने साक्ष्यों को इस प्रकार परखने में गंभीर त्रुटि की मानो वह अपील न्यायालय हो।मामले पर विचार करते समय उच्च न्यायालय का दृष्टिकोण स्पष्ट त्रुटिपूर्ण है और हमारे विचार से, इस मामले पर उच्च न्यायालय द्वारा कानून के अनुसार नए सिरे से विचार किए जाने की आवश्यकता है।इस संक्षिप्त आधार पर, हम मामले को उच्च न्यायालय को वापस भेजते हैं। –'

28. यहाँ प्रस्तुत तथ्यों पर पुनः विचार करते हुए, हम पाते हैं कि विद्वान एकल न्यायाधीश और खंडपीठ ने अपील न्यायालयों के रूप में कार्य किया और साक्ष्यों का पुनर्मूल्यांकन किया, जिसके प्रति ऊपर उल्लिखित प्राधिकारी आगाह करते हैं।भारती एयरटेल लिमिटेड बनाम ए.एस. राघवेंद्र, (2024) 6 एससीसी 418 में वर्तमान कोरम ने निम्नलिखित निर्धारित किया है:

'29.जहाँ तक तथ्यों का पुनर्मूल्यांकन करने की उच्च न्यायालय की शक्ति का प्रश्न है, यह नहीं कहा जा सकता कि संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के अंतर्गत यह पूरी तरह से अनुचित है। तथापि, हस्तक्षेप को उचित ठहराने के लिए, उच्च न्यायालय के समक्ष न्यायिक जाँच का सामना कर रहे न्यायाधिकरण के आदेश में सामान्य से अधिक त्रुटिपूर्णता का स्तर होना आवश्यक है।

हमें नहीं लगता कि वर्तमान तथ्यों में ऐसी कोई स्थिति विद्यमान थी।इसके अतिरिक्त, उत्तरवादी द्वारा अपने तर्कों के समर्थन में जिन निर्णयों पर भरोसा किया गया है, उनका अनुपात वर्तमान तथ्यों पर लागू नहीं होगा' (जोर दिया गया)"

17. उपर्युक्त विधिक स्थिति के आलोक में और माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित कानून पर विचार करते हुए, यह स्पष्ट है कि दोनों निचली अदालतों ने आवेदन को समय–सीमा द्वारा वर्जित मानकर अवैधता की है, लेकिन यह निष्कर्ष दर्ज करने में कोई अवैधता या अनियमितता नहीं की है कि याचिकाकर्ता 140 दिनों तक अनुपस्थित रहा और उसके अनुपस्थित रहने के पिछले उदाहरण भी हैं, जिसके लिए उसे कई बार दंडित किया गया है, जिससे स्पष्ट रूप से यह स्थापित होता है कि वह कर्तव्य से अनुपस्थित रहने का आदी है। इस प्रकार, याचिकाकर्ता पर लगाया गया सेवा से निष्कासन का दंड उसके द्वारा किए गए कदाचार के अनुपात में है।

18. समस्त तथ्य और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री पर विचार करते हुए, मेरा विचार है कि दोनों विचारण न्यायालय ने याचिकाकर्ता की बहाली के आवेदन को खारिज करके कोई अवैधानिकता नहीं की है। परिणामस्वरूप, श्रम न्यायालय द्वारा आवेदन को खारिज करने और औद्योगिक न्यायालय द्वारा कदाचार के लिए पुष्टि किए जाने संबंधी विवादित आदेश कानूनी और न्यायोचित हैं और याचिकाकर्ता किसी भी राहत का हकदार नहीं है, यद्यपि इस न्यायालय ने माना है कि सी.जी.आई.आर. अधिनियम की धारा 31(3) के तहत याचिकाकर्ता द्वारा दायर आवेदन, समय–सीमा से वर्जित नहीं है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

19. रिट याचिका खारिज किए जाने योग्य है और तदनुसार इसे खारिज किया जाता है।इस पर कोई वाद व्यय देय का आदेश नही दिया जाता है ।

सही/–
(नरेंद्र कुमार व्यास)
न्यायाधीश

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरणः *हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा । समस्त कार्यालयी एवं व्यवाहरिक प्रयोजनों हेतु* ***निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वियन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।***

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur